वेदान्त आश्रम एवं मिशन की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष - २५ दिसम्बर - २०२५ प्रकाशन - १२

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

दिसम्बर २०२५

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

वेदान्त पीयूष

विषय सूचि

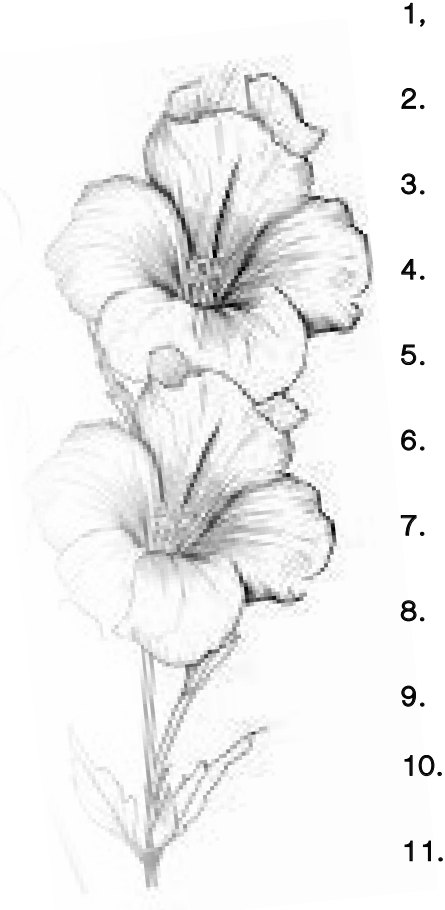

1,	प्रकाशक पृष्ठ	02
2.	श्लोक	05
3.	पू. गुरुजी का संदेश	06
4.	वाक्यवृत्ति	12
5.	गीता और मानवजीवन	17
6.	जीवन्मुक्त	22
7.	श्री कैकेयी चरित्र	25
8.	कथा-अर्जुन - किरात युद्ध	29
9.	आश्रम-मिशन समाचार	36
10.	आगामी कार्यक्रम	56
11.	इण्टरनेट समाचार	59
12.	लिन्क	60

दिसम्बर 2025

आत्मबोध

श्लोक : ५३

उपाधिविलयाद्विष्णौ
निर्विशेषं विशेन्मुनिः।
जले जलं वियद्व्योम्नि
तेजस्तेजसि वा यथा॥

मुनि उपाधि का उन व्यापक तत्त्व विष्णु में विलय हो जाने पर निर्विशेष तत्त्व में उसी प्रकार से प्रवेश कर जाता है, जैसे जल में जल, आकाश आकाश में तथा अग्नि तत्त्वअग्नि में विलीन हो जाता है।

सन्देश

पूज्य गुरुजी
स्वामी आत्मानन्दजी

यज्ञ-भाव चित्तशुद्धि का साधन

हम सब निर्मल मन की कामना करते हैं:

मन की पवित्रता का अर्थ है – अपने सभी कर्तव्यों को न्यायपूर्वक निभाने की क्षमता, समस्याओं का समाधान ढूंढने की क्षमता (दुर्भाग्य, नकारात्मकता, पछतावे के भाव से रहित) अपने आसपास सभी के लिए प्रेम, करुणा व्यक्त करने की क्षमता, जीवन के सूक्ष्म आयामों की ओर ध्यान ले जाने और उन पर ध्यान करने की क्षमता। पवित्र मन का अर्थ है कि मन की स्वाभाविक अवस्था शान्त और सकारात्मक हो। ऐसा मन स्वास्थ्य, भावनाओं और गहन ज्ञान का द्वार बन जाता है। यही कारण है कि हमारे शास्त्र बार-बार ऐसे मन की प्रार्थना के लिए प्रेरित करते हैं। चाहे हनुमान चालीसा हो, जहां हम दर्पण समान निर्मल मन की प्रार्थना करते हैं, या गायत्री मंत्र जहां हम प्रेरणादायी और बुद्धिमान विवेक की कामना करते हैं।

यज्ञभाव – चित्तशुद्धि का साधन

निर्मल मन प्रत्येक व्यक्ति प्राप्त करना चाहता है

हर व्यक्ति अच्छा स्वास्थ्य, आकर्षक व्यक्तित्व, संवेदनशील मन और सूक्ष्म बुद्धि चाहता है। परन्तु बड़ा प्रश्न यह है कि, ऐसा निर्मल मन कैसे प्राप्त हो? क्या यह केवल भाग्य, ईश्वर की इच्छा पर निर्भर है, या सही शिक्षा और विधि-प्रणाली से इसे विकसित किया जा सकता है? प्रारब्धवादी कहते हैं कि, सब ईश्वर इच्छा पर निर्भर है।

शिक्षावादी कहते हैं कि सही प्रक्रिया से हर व्यक्ति में ऐसा मन विकसित किया जा सकता है। किसी को अधिक समय लगेगा किसी को कम।

मन अपवित्र कैसे बनता है?

यह समझना अति-आवश्यक है कि मन अस्थिर, और अशान्त क्यों रहता है? इतना सब होने के बावजूद – अनुभव, सम्बन्ध, आनन्द यह सब होते हुए भी हमारी अपने बारे में चिन्ता वैसी ही बनी रहती है। यह स्वकेन्द्रित चिन्ता बढ़ते बढ़ते स्वार्थ, निराशा और कभी कभी राक्षसी प्रवृत्तियों में बदल जाती है। संसार में तरह-तरह के लोग दिखते हैं और यह भी कि मनुष्य कितना नीचे गिर सकता है। सिर्फ बड़े कानून काफी नहीं, अच्छाई भीतर

से खिलनी चाहिए। इस व्याधि की जड़ को समझना अनिवार्य है। यदि इसे न समझा जाए तो यह महामारी की तरह फैलता जाएगा और समाज को दुष्टता के हाथों सौंप देगी।

अहंकार–सभी अशुद्धियों की जड़

अशुद्ध मन का कारण है– स्वचिन्ता, असुरक्षा और इच्छाएं। क्या ये स्वाभाविक है या किसी गहरे रोग का लक्षण?

सीधे शब्दों में –हर व्यक्ति अपने को सीमित समझता है; और यही असुरक्षा का मूल है। इसीसे निरन्तर 'मैं चाहता/चाहती हूं' का सिलसिला चलता रहता है। चाहे कितना भी पाएं, यह अभाव की भावना फिर उभर आती है।

अहंकार–झूठा 'मैं'

सभी महान दार्शनिकों और विशषतः वेदान्त के मनीषियों का मत है कि हर व्यक्ति मूलतः पूर्ण और दिव्य है। वे इसके लिए तर्क भी प्रस्तुत करते हैं। जो आंखों से दीखे, वह हमेशा सत्य नहीं होता– सूर्य और चन्द्रमा समान आकार के लगते हैं, पर है नहीं। सितारे टिमटिमाते कण जैसे दीखते हैं, पर उनमें से

अनेक सूर्य से भी बड़े है। ठीक इसी प्रकार हम अपने बारे में जो सतही धारणा बना लेते हैं, वह गलत है।

वस्तुतः 'मैं' शरीर नहीं है बल्कि चैतन्य, जीवनतत्व है। जो शरीर-इन्द्रियों के माध्यम से व्यक्त होता है। यदि इस तथ्य को मान ले, तो दृष्टिकोण बदल जाता है- हम छोटे, तुच्छ या असुरक्षित नहीं है; हम अनन्त चैतन्य हैं। भले ही इसे तुरन्त अनुभव न करें, किन्तु इसे समझकर और मानकर जीवन में एक नया अध्याय आरम्भ किया जा सकता है।

जीवन में एक नया अध्याय आरम्भ करे

इस नए अध्याय का अर्थ है- हम कर्म कुछ पाने के लिए नहीं किन्तु 'देने' के लिए करें। क्योंकि हम भीतर पूर्ण हैं। सच्चे प्रेम का भाव भी इसीसे उत्पन्न होता है। जो लोग आपको सच्चा प्रेम करते हैं, वे निःस्वार्थ होते हैं। ऐसे लोग ही वास्तव में मूल्यवान होते है। जो कर्म स्वार्थ से नहीं, बल्कि दूसरों के कल्याण को ध्यान में रखकर किया जाए, वही यज्ञभाव है।

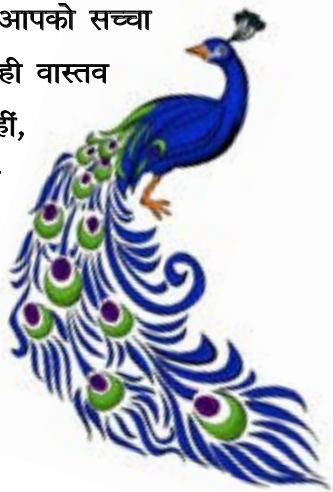

पूजा या हवन में जो कर्म किए जाते है- वे कर्तव्य, बोझ या अपेक्षायुक्त नहीं, बल्कि श्रद्धा और कृतज्ञता का भाव होते हैं।

यज्ञभाव – चित्तशुद्धि का साधन

भगवद्गीता कहती है कि यज्ञभाव को हम हर कर्म में ला सकते हैं। ऐसे कर्म मन की अशुद्धियों की जड़ को नष्ट करते हैं जब हम बिना किसी सौदेबाजी के, प्रेम और समर्पण से अपना श्रेष्ठ देते हैं, तो जीवन में स्वतः शान्ति, पवित्रता और सूक्ष्म बुद्धि प्रकट होती है। यही वास्तव में आगे बढ़ने का मार्ग है।

आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

वाक्यवृत्ति

स्वामिनी अमितानन्द

यस्य प्रसादादहमेव विष्णुः मयि-एव सर्वं परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्यान्घ्रि पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्।।

श्लोक – २९

निरस्ताशेष संसार
दोषोऽस्थूलादि लक्षणः।
अदृश्यत्वादि गुणकः
पराकृत तमो मलः॥

जो संसार के समस्त स्थूलादि दोषों से रहित, अदृश्यादि लक्षण वाला, समस्त अज्ञानरूपी मल से रहित तत्त्व है..... वही ब्रह्म है, ऐसा निश्चय करों।

वाक्य वृत्ति

आचार्य ने तत् पद का अर्थ बताना प्रारम्भ किया हैं। उसकी भूमिका बनाते हुए पूर्व श्लोक में कहा कि जिस प्रकार त्वं पद के अर्थ का निश्चय किया गया, उसी प्रकार तत् पद के अर्थ का भी विधेयात्मक और निषेधात्मक लक्षणा के द्वारा निश्चय किया जाना चाहिए। इस श्लोक से ईश्वर की लक्षणा के प्रतिपादन का अध्याय आरम्भ हो रहा है।

जैसे पूर्व में देखा कि पहले निषेधात्मक अर्थात् अतद्व्यावृत्ति लक्षणा का प्रयोग किया जाता है। इस श्लोक में निषेधात्मक भाषा का प्रयोग करते हुए बताया कि निरस्त अशेष संसार - अर्थात् ईश्वर में संसार का पूर्णतया अभाव है। संसार बाह्य, अनित्य जगत के प्रति सत्यता की बुद्धि रखकर सतत सुख-पूर्णता की प्राप्ति के प्रयास का नाम है। यह प्रयास अन्तहीन होता है। जब हम अपने स्वरूप के बारे में अनभिज्ञ होते है, तब ही उसके बारे में अपूर्ण

होने की धारणा बनाकर उसके अधूरेपन को दूर करने का प्रयास करते हैं। उसके लिए हमारे समक्ष जो बाह्य जगत दृष्ट हो रहा है, उसे सत्य मानकर उससे पूर्णता पाने की आकांक्षा, यह हमें बहिर्मुख बनाती है। उसके उपरान्त हमारे अन्तहीन प्रयास व चेष्टा होना स्वाभाविक है, क्योंकि जगत जो अपने आपमें जड़, विकारी, अशाश्वत है, उसमें सुख की कल्पना करना मोह है। अतः उससे पूर्णता की सम्भावना है ही नहीं, और जहां सुख नहीं है वहां सुख की कल्पना करके उसके लिए प्रयास करना, अन्तहीन होता है। किन्तु ईश्वर वो है जिनके वश में माया है, अपनी इस शक्ति के माध्यम से जगत का सृजनादि करते हैं, उस समय भी उनमें अपने स्वस्वरूप के ज्ञान की विस्मृति या मोह नहीं होते है। जहां अज्ञान व तज्जनित मोह का अभाव है, वहां संसार टिक ही नहीं सकता है। एवं ईश्वर में संसारित्व का निषेध करने के माध्यम से उनकी दृष्टि में द्वैत जगत की सत्यता का निषेध कर दिया गया।

यहां आचार्य अस्थूलादि लक्षणः के माध्यम से श्रुति प्रमाण दे रहे हैं। बृहदारण्यक उपनिषद् में ईश्वर के लक्षण बताते हुए कहा जो अस्थूलम् अनणु अह्रस्वं अदीर्घं अलोहितु अस्नेहं....। इस प्रकार जो वस्तु व्यक्त होती है, उसमें जो भी गुण होते है, स्थूलत्व आदि... उन समस्त गुणों का निषेध करने के माध्यम से यह दीखा रहे है कि यह कोई जगत् की वस्तु या किसी व्यक्ति की तरह नहीं है कि जो एक समय विशेष में व्यक्त होकर अव्यक्त में विलय को प्राप्त हो जाएं।

अदृश्यत्वादि गुणकः। यहां पर भी उपनिषद् प्रमाण देते हुए मुण्डक उपनिषद् की ऋचा को बता रहे हैं, 'यत्तद् अद्रेक्ष्यं अग्राह्यं... आदि रूप है। अर्थात् परमात्मा जगत की वस्तुओं की तरह दश्य अर्थात् हमारी इन्द्रियों का विषय नहीं बनता। इस प्रकार समस्त जन्मादि से परे जो तत्त्व है, जो पराकृत तमो मलः अर्थात् अज्ञान व उससे जनित मलिनता से रहित है – वह ईश्वर है, वही ब्रह्म है। इस प्रकार निश्चय करना चाहिए। इन सबके निषेध के उपरान्त जो भी शेष रहता है, वही ईश्वर है।

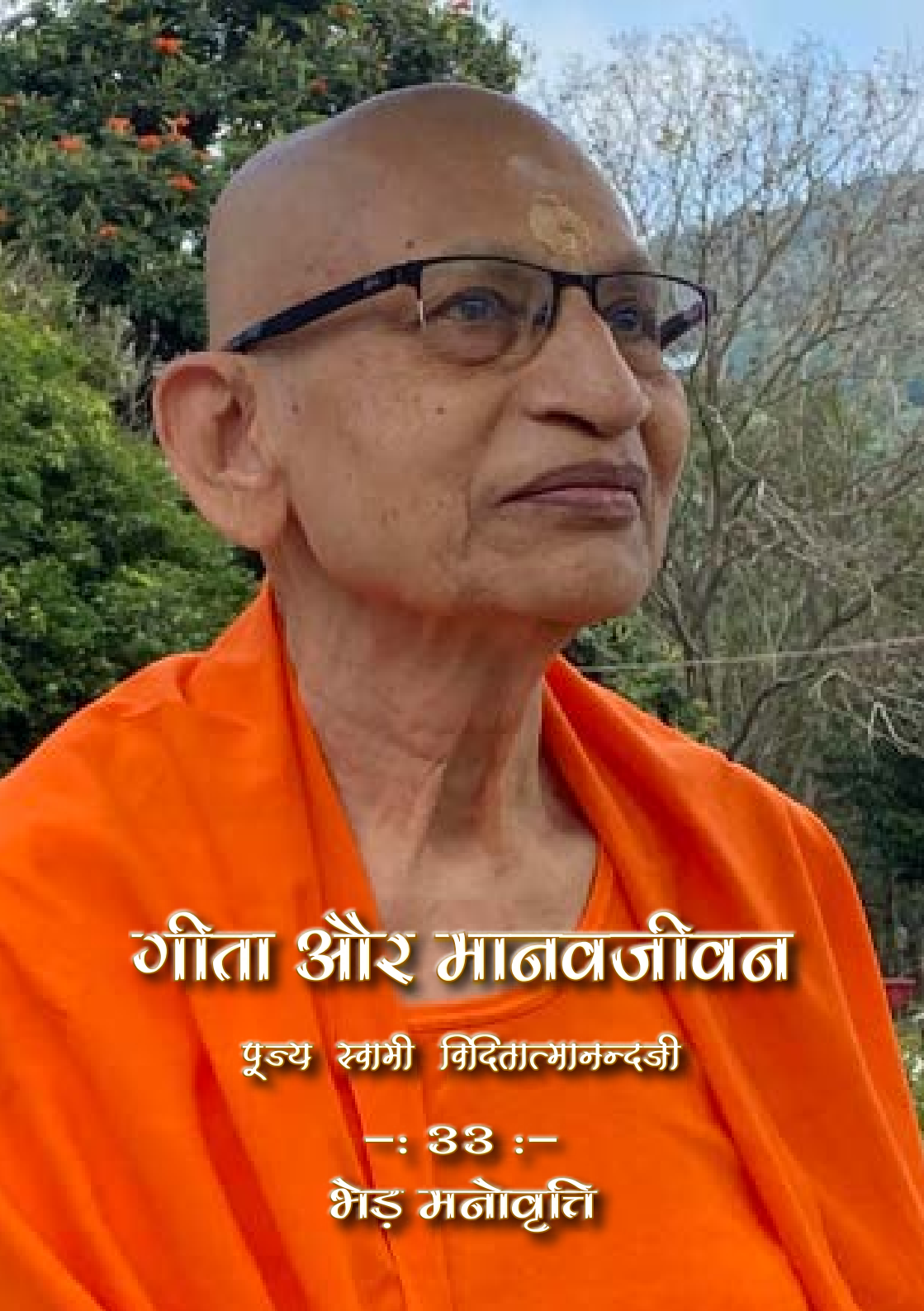

गीता और मानवजीवन

पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी

–: 33 :–

भेड़ मनोवृत्ति

गीता और मानवजीवन

मनुष्य देखादेखी में जीता है। 'उनके पास यह गाड़ी है, तो हमारे पास भी होनी चाहिए। उनके जैसा घर-बंगलो हमारे पास होना चाहिए।' और फिर येन केन प्रकारेण, कैसे भी करके उसकी प्राप्ति का प्रयास करना। किन्तु यदि हम अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की शोध करें तो यह समझ में अता है कि इन सब की हमें आवश्यकता होती नहीं है।

स्वामी दयानन्दजी बताते थे कि एक बार एक बहुत ही धनवान व्यक्ति उनके पास आया और कहने लगा, 'महाराज! हमारे पास सबकुछ है, किन्तु शांति नहीं है। हमें बहुत ही चिन्ता रहती है।' स्वामीजी ने उनसे कहा, 'एक काम करो। इकतालीस दिन तक तुम एक व्रत लो कि अपना भोजन खुद ही बनाना, भोजन की आवश्यक

सामग्री भी स्वयं लाना, जितना भोजन पकाया हो, उतना पूरा खा लेना और रसोई और खाने में जिन बर्तनों का प्रयोग किया उसे खुद ही साफ करना।' स्वामीजी में श्रद्धा के कारण उन्होंने यह व्रत लिया। पहले दिन तो अंदाज नहीं था, इतना सारा आटा गुंधा, उससे बहुत सारी रोटियां बनी। सब खाया तो नहीं जा सकता था, किन्तु जबरदस्ती खा लिया। फिर तो जैसे जैसे सभान होता गया, उनको यह समझ में आने लगा कि खुद की आवश्यकताएं कितनी कम है। फिर तो उतनी ही रसोई बनाने लगा जितने की आवश्यकता थी। दस दिन के बाद स्वामीजी के पास आकर वह कहता है, 'स्वामीजी! अब हमें कोई चिन्ता नहीं है।' स्वामीजी ने पूछा, क्यों क्या हो गया कि चिन्ता नहीं है? वह बताने लगा कि, 'बस! हमें तीन रोटी, थोड़ी सब्जी और थोड़ा सा चावल मात्र चाहिए। फिर किसके लिए, क्यों मैं चिन्ता करुं? हमारी आवश्यकता है कितनी?

वैसे देखें तो हमारी आवश्यकता कितनी है? हम अपनी आवश्यकताओं को बढ़ाएं तो वह बढ़ेगी। किन्तु सही में यह सब आवश्यकता की तरह से गिना जा सकता है? शास्त्र अपरिग्रह व्रत का निर्देशन करता है। आवश्यकता से अधिक वस्तु का संग्रह

नहीं करें। मात्र देखदेखी से हम कितना कुछ करते है! जीवन का अमुक स्टाण्डर्ड होना चाहिए, यह कौन निश्चित करता है? भगवान ने दी हुई बुद्धि का हम स्वतंत्रतापूर्वक प्रयोग नहीं करते है और देखदेखी में भेड़चाल चलते है। लोग हमें बताते नहीं है कि उनको क्या अनुभव हुए और उनकी नकल हम करते है।

एक बार गांव के पांचेक बच्चे घुमने गएं। घुमते घुमते बहुत दूर निकल गएं। वहां एक वृक्ष के पीचे गणेशजी की मूर्ति देखी। गणेशजी की तोंद तो बड़ी होती ही है। और तोंद में नाभि की जगह पर एक छेद था। बच्चे अर्थात् वानरवृत्ति। एक बच्चे ने नाभि में उंगलि डाली और डालते से ही बाहर निकाल लिया। दूसरा उनसे पूछता है कि, 'क्यों, क्या हुआ? उसने कहा, बहुत ठण्डा ठण्डा लग रहा है।' दूसरे ने उंगलि डाली उसने भी तुरन्त वापिस खिंच लिया। तीसरे ने पूछा कि, क्यों? क्या हुआ? उसने कहा, 'बहुत मजा आया।' इस प्रकार एकैक करके सबने उसमें उंगलि डाली। आखरी बच्चे ने उंगलि खोसी तो उसे पता चला कि अन्दर एक बिच्छु बैठा था, जो उसमें उंगलि डालता था, उसको डंख मारता था। किन्तु कोई दूसरे को नहीं बताता था। उसी तरह से जीवन के अनुभवों में दूसरे हमें

बताते नहीं है कि उनपर क्या बीत रही है और हम बगैर समझे इस भेड़प्रवाह में धकेले जा रहे है। बड़े हुए, कालेज गएं, नौकरी लिया, शादी किया, इत्यादि...। अंदर घूसने के बाद पता चलता है कि दूसरे जैसे करते है, वह सदैव हमारे योग्य होता नहीं है।

मात्र देखदेखी से हम कितनी सारी चीजें करते रहते है! केलिफार्निया की फेशन तुरन्त ही न्यूयोर्क पहुंचती है और फिर वहां से अपने शहर में आए! वहां जिन्स शुरु हो कि तुरन्त ही यहां का युवा भी पहनने लगता है। अपने देश के हवामान में इतना मोटा जिन्स आरामदायी है या नहीं, उसका कोई विचार रहीं। जीवन में कुछ गम्भीरता, कुछ परिपक्वता नहीं! जीवन के प्रयोजन विषयक बहुत कम विचार होता है कि यह जीवन किस चीज के लिए है? अपनी संस्कृति क्या कहती है? अपने यहां किस चीज का गौरव या महिमा है? अपने यहां गौरव, महिमा - त्याग, तपस्या, ज्ञान की है।

अर्थ, काम विगेरे प्राप्त करने में कोई हर्जा नहीं है। आवश्यकता के अनुरूप अवश्य धन-सम्पत्ति का उपार्जन करें। किन्तु उसकी प्राप्ति में जो धर्म अर्थात् अपने मूलभूत मूल्यों का बलिदान देना पडे तो उसकी प्राप्ति का कोई मूल्य नहीं है।

जीवनमुक्त

– ९९ –

बदरीनाथ

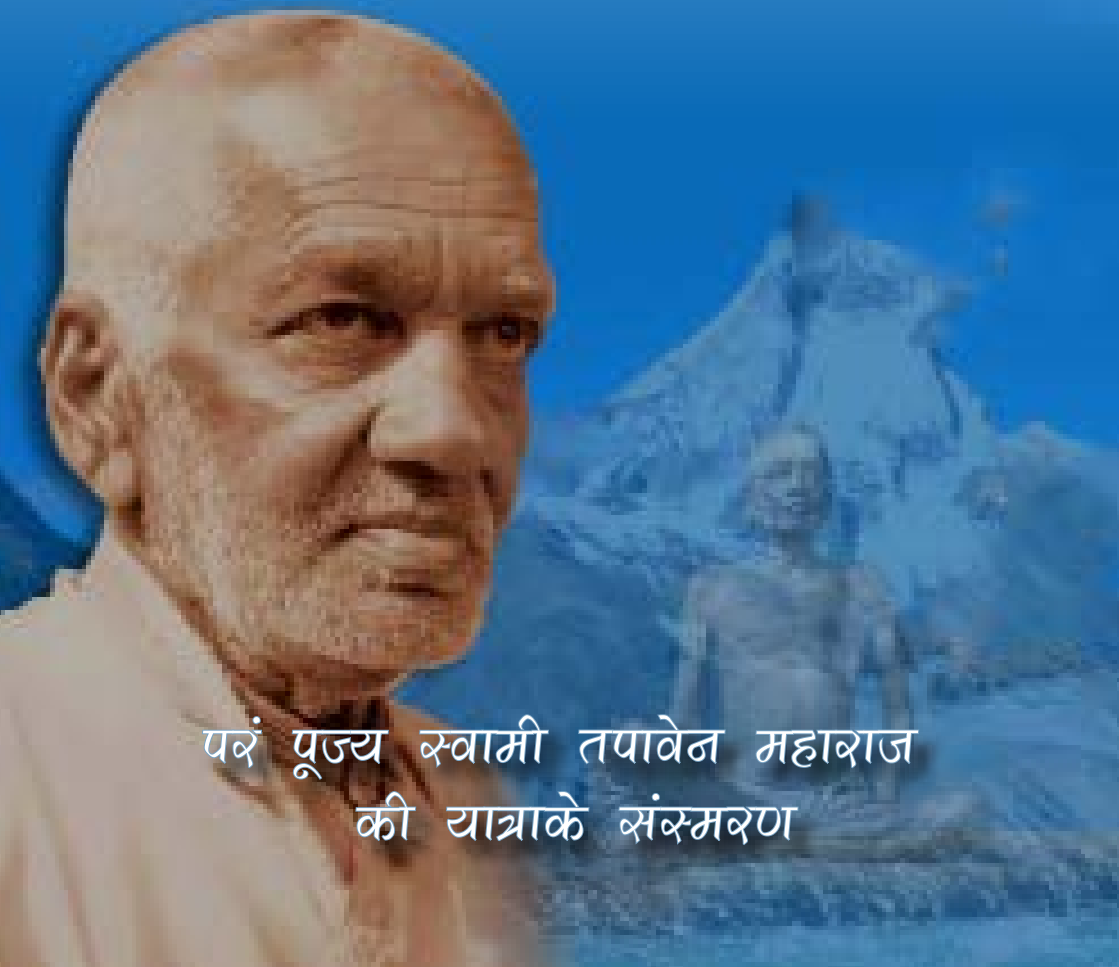

परं पूज्य स्वामी तपावेन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त

यहां ईश्वरीय अखंड विभूति के नृत्य को देखकर मेरा मन आनंद विमुग्ध हो गया। ईश्वरीय महिमा के विस्तार को देख देखकर मैं मदोन्मत्त हो उठा। सच तो यह है कि ईश्वर ही हिम संहिता के रूप में शोभायमान हैं। ईश्वर ही मनोहर सरोवरों तथा कुण्डों के रूप में सुशोभित हो रहे है। ईश्वर ही महा–उन्नत्त पर्वत बनकर मेघमंडल को चीरते हुए दिखायी देते हैं। ईश्वर ही इस शीत मारुत के रूप में प्रचण्डता से चल रहे हैं। स्फटिक निर्मल निर्झरों के रूप में बहनेवाला भी ईश्वर ही है। यह जो कुछ दिखाई देता है, सब कुछ ईश्वर ही है। समग्र हिमालय ईश्वर है। हिमालय ही नहीं, समस्त भूमण्डल भी ईश्वर है। सारा ब्रह्माण्ड ही ईश्वर हैं। ईश्वर को छोड़कर और कोई वस्तु नहीं। ईश्वर की सत्ता में सभी वस्तुएं जीती हैं। ईश्वर की सुन्दरता में सभी वस्तुएं और

भी अधिक सुन्दर बन जाती है। इस प्रकार हिमकूटों में, सरसरिता में मिट्टी कांटों में, हवा-धूप में, सुख-दुःख में सर्वत्र परमात्ममहिमा का ही साक्षात्कार करते हुए मैं उस दिव्यभूमि के अकृत्रिम सुष्मा विलास का आस्वादन करता रहा।

किन्तु इस आस्वादन महोत्सव को अधिक दिनों तक बनाये रखने में मैं असमर्थ था। अतः उदासीन मन के साथ ही मैं वहां से बदरीनाथ लौटा था। श्रावण तथा भाद्रपद महीने ही वहां की यात्रा करने का उचित समय है। चूंकि मेरी यात्रा आषाढ़ में थी और मार्गदर्शन कोई सहचारी भी साथ नहीं था, इसलिए अधिक आगे बढ़ने में असमर्थ होकर स्वर्गाराहिणी आदि स्थानों का कुछ दूरी पर खड़े होकर ही मैंने दर्शन किया था। धन्य धन्य स्वर्गारोहिणी! महाधन्य, महाधन्य धर्मपुत्र! आप दोनों जग में अनन्तकाल तक विराजित रहें।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)

श्री कैकेयी चरित्र

– 03 –

प्रनवउं परिजन सहित विदेहू।
जाहि राम पद गूढ सनेहू।।

श्री कैकेयी चरित्र

आज भी मानस के अनेक पाठक कैकेयी के इन सद्भावों से उच्छ्वासित हो उठते हैं। पर इसे स्पष्ट करने के लिए मैं एक ही दृष्टान्त देना चाहूंगा। नदी स्नान करने जाने वाले व्यक्तियों को इस समस्या का सामना करना पडता है। स्नानार्थी केवल जल देखकर ही चाहे जहां स्नान के लिए प्रस्तुत नहीं हो जाता। उसे जल के नीचे आधार का ध्यान बना रहता है, जहां खड़े होकर उसे जल में अवगाहन करना है। यदि जल का आधार शुष्क रेतीली भूमि हो तभी उसे स्नान का सच्चा सुख प्राप्त होता है। किन्तु यदि भूमि कीचड़ से भरी हुई हो तो चतुर स्नानार्थी वहां स्नान करने की भूल कभी नहीं करता है। कैकेयी अम्बा के सद्भाव के जल के नीचे तहछट में अहंकार का तो कीचड़ भरा हुआ है मन्थरा उससे भली भांति परिचित है। पैर से कीचड़ का स्पर्श होते ही जैसे सारा जल मलिन हो उठता है

ठीक वही स्थिति यहां भी है। मन्थरा उस तलछट को उपर लाने में समर्थ हो जाती है। कैकेयी जी के द्वारा रामभद्र की प्रशंसा में प्रयुक्त शब्दावली ध्यान देने योग्य है। यदि वे यह कहकर प्रशंसा करती कि 'राम सभी माताओं को समान आदर और स्नेह देते हैं।' तो निश्चित रूप से यह सात्विक सद्भाव से प्रेरित सराहना होती। किन्तु उसमें अहंकार का राजसी स्वर उभर आया, 'किन्तु मुझसे वे अधिक स्नेह करते हैं।' रही सही तमोगुणी दुर्बलता बोल उठी, 'मैंने प्रीति की परीक्षा लेकर यह देखा है।' स्पष्ट हो गया कि सारी प्रशंसा अहं केन्द्रित थी। श्री राम की श्रेष्ठता उनके सद्गुणों को लेकर नहीं स्वीकार की गई थी, वे अच्छे हैं, क्योंकि मुझे अधिक सम्मान देते हैं। परीक्षा भी सद्गुणों की न लेकर इस दृष्टि से ली गई थी कि देखें मुझे अधिक चाहते हैं अथवा किसी अन्य को! मन्थरा ने अहंकार की तलछट को शब्दों के आघात से उपर उछाल दिया। उसने कैकेयी के स्वभाव की भूरि-भूरि प्रशंसा करके उनके अहं को तृप्त किया फिर बनावटी सहानुभूति का प्रदर्शन करते हुए कह उठी, 'आपने जो सद्भाव भरे वाक्य कहे हैं, वे तो आपके अनुरूप ही हैं, पर मैं तो एक भिन्न सूचना के आधार पर भविष्य को दृष्टिगत रखकर कह रही हूं। पुराने दिन बीत गए। सत्य तो यह है कि पहले भी आन्तरिक रहस्य दूसरा

ही था। कौशल्या का सारा सद्भाव केवल दिखावे का था। महाराज श्री आपको अधिक चाहते थे। भला यह सौतों को कैसे प्रिय लग सकता था। पर चतुर और स्वभाव से गम्भीर कौशल्या ने उसे उपर से कभी प्रकट नहीं होने दिया। वे उचित अवसर की प्रतीक्षा में थी। धैर्यपूर्वक उन्होने अपनी योजना क्रियान्वित की। पहले तो भरत को ननिहाल भेज दिया गया। फिर प्रचारपूर्वक राम के युवराज पर पर अभिषिक्त करने की मांग की गई। पर आगे की योजना तो और भी भयानक है। राम के सिंहासनासीन होते ही भरत कारागार में डाल दिए जाएंगे और तुम्हें सौत की सेवा करनी होगी।' कैकेयी के अहं को यह सुनते ही इतना तीव्र आघात लगता है कि उनका सारा पूर्व सद्भाव समाप्त हो जाता है और अहमन्यता एवं ममता का कीचड़ उनके सारे उच्च विचार के प्रदर्शन को मलिन बना देता है। वस्तुतः कैकेयीजी के चरित्र में अधिकार की वृत्ति ही सबसे उपर है। जब वे ब्रह्मा से यह वरदान मांगती हैं कि राम अगले जन्म में मेरे पुत्र बनें तो वहां भी यही प्रवृत्ति सूक्ष्म रूप से विद्यमान है। यद्यपि कौशल्या अम्बा की तुलना मे राघवेन्द्र उन्हें अधिक सम्मान देते हैं। पर उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि व्यवहार कैसा भी क्यों न हो लोकदृष्टि में राम कौशल्या के ही पुत्र माने जाएंगे मेरे नहीं।

कथा / प्रसंग

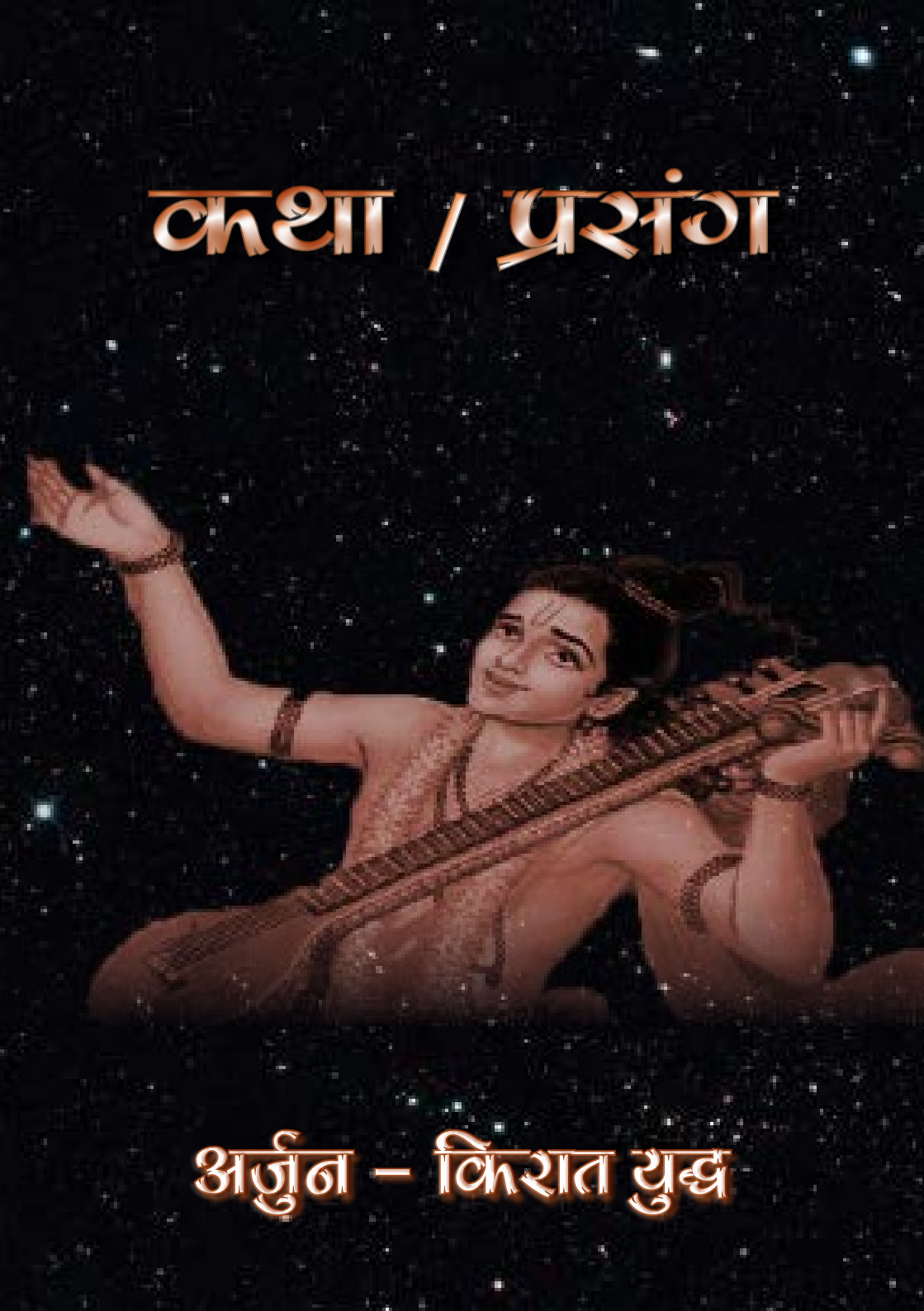

अर्जुन – किरात युद्ध

अर्जुन-किरात युद्ध

अर्जुन वनवास के दौरान महाभारत के युद्ध की तैयारी कर रहा था। युद्ध में कर्ण उनके लिए बड़ी चुनौतिरूप था। इसलिए कर्ण को युद्ध में मार गिराने के लिए अर्जुन पाशुपतास्त्र प्राप्त करना चाहता था। इसके लिए वह इन्द्रनील पर्वत पर महादेवजी की माटी की प्रतिमा बनाकर तपस्या कर रहा था। उसकी कठिन तपस्या के ताप से पूरा वनप्रदेश जल उठा। वहां रहनेवाले ऋषि-मुनि भयभीत हो गए।

वे भगवान शिव के पास पहुंचे और भगवान की स्तुति करते हुए उनसे कहा कि - भगवान् एक तपस्वी जंगल में घनघोर तपस्या कर रहा है। उसकी तपस्या के हवन-कुण्ड की आग से समूचा जंगल तपने लगा है। हम लोगों का वहां रहना मुश्किल हो गया है। कृपया हमें उससे मुक्ति दिलवाइए। भगवान् शिव ने उन्हें आश्वस्त किया। फिर मुनिगण अपने निवास की और लौट गएं। ऋषि-मुनियों के चले जाने पर पार्वतीजी से महादेवजी ने बताया कि अर्जुन ही पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने के लिए तप कर रहा है। बिना पाशुपत अस्त्र प्राप्त किए वह अपना तप

भंग नहीं करेगा।

हम वेश बदलकर उनके पास पहुंचते हैं। उनकी परीक्षा करेंगे कि वह पाशुपत अस्त्र धारण करने का अधिकारी है भी या नहीं। अगर वह अपनी परीक्षा में सफल हुआ तो मैं उसे अवश्य पाशुपत अस्त्र प्रदान करुंगा। शिव और पार्वती दोनों ने वेश बदला, महादेव किरात बन गएं और पार्वतीजी किरातपत्नी। महादेव के रुद्रगणों ने स्त्रियों का वेश धारण किया। कुछ गण पुरुष वेशमें ही किरात का वेश धारण करके उनके साथ चल पड़ें। वे सब उस उपवन में पहुंचे जहां अर्जुन शिवजी की प्रतिमा के सम्मुख बैठा कठिन तप कर रहा था। निकट धरती पर अस्त्र-शस्त्र रखे हुए थे। उस वन में एक विकट राक्षस रहता था। सारे ऋषि-मुनि उससे भयभीत रहते थे। राक्षस ने अर्जुन को अकेले बैठे तप में लीन देखा तो उसने एक सुअर का वेश बनाया और वह सीधा अर्जुन की और झपटने को तैयार हुआ।

तभी पार्वतीजी की दृष्टि अर्जुन पर झपटने को तैयार सुअर पर पड़ी। यह देखकर महोदवजी ने अपने धनुष पर बाण चढ़ा लिया। वे बाण छोड़ने को उद्यत हुएं। किन्तु अर्जुन भी सजग था। सुअर के भागते कदमों की उसे

अर्जुन – किरात युद्ध

भी आहट मिल चुकी थी। अर्जुन स्फूर्ति से उठ खड़ा हुआ और अपना धनुष लेकर उस पर बाण चढ़ा लिया। किरात रूपी शिव और अर्जुन दोनों के बाण एक साथ छूटे और सुअर रूपी राक्षस के शरीर में जा घूसे। सुअर के मुंह से दिल दहलानेवाली चित्कारें फूट निकली। समूचा जंगल कांप उठा। वह एक पहाड़ की तरह जमीन पर धड़ाम से आ गिरा। किरात बने भगवान शिव के गणों ने जय-जयकार करनी आरम्भ कर दी।

किरात और अर्जुन दोनों एक साथ मृत सुअर के पास पहुंचे। अर्जुन मुस्कुराते हुए बोला, 'निशाना तो तुमने भी ठीक ही लगाया, किन्तु तुम चूक गएं। तुम्हारे पहले हमारा बाण सुअर को लगा और एक ही बाण में सुअर को यमलोक पहुंचा दिया।

किरात बोला, 'लेकिन यह तो मेरे बाण से मरा है। मेरे सब साथी जानते हैं कि बाण मैंने पहले चलाया था। सुअर मेरे बाण से मरा है, न कि तुम्हारे बाण से।' इस बात पर महादेवजी और अर्जुन के बीच में वाद विवाद हो गया। अर्जुन की भृकुटी तन गई। वह क्रोध में आकर बोला, 'बाण मेरा लगा है। सुअर मेरे ही बाण से मरा है,

न कि तुम्हारे बाण से।'

शिव बने किरात ने भी गुस्से से भरकर कहा, 'तो फिर ठीक है। इसका फैसला युद्ध से हो जाए। जो जीत जाए, वही इसे मारने का वास्तविक अधिकारी माना जाएगा।

फिर दोनों में भयानक युद्ध छिड़ गया। दोनों ओर से बाणों की वर्षा होने लगी। एक बाण छोड़ता तो दूसरा तत्काल उसे काट देता। काफी देर तक यह युद्ध चलता रहा। अर्जुन के सारे बाण समाप्त हो गए। वह चिन्तित होकर सोचने लगा, 'आश्चर्य है, मेरो सारे बाण समाप्त हो गए, किन्तु किरात को एक खरोंच तक नहीं आई है। यह कैसा चमत्कार है! यह सोच उसने धनुष उठाया और उसकी डोरी से किरात को फंसा लिया। लेकिन अगले ही क्षण उसे एक तीव्र झटका सा लगा। किरात ने न सिर्फ स्वयं को ही मुक्त करा लिया बल्कि अर्जुन को भी उपर उठाकर दूर पटक दिया। अर्जुन के कोई भी अस्त्र-सस्त्र किरात से युद्ध में नाकाम सिद्ध हुए। अर्जुन क्रोध से पागल हो उठ़ा। वह पेड़ उखाड़-उखाड़कर किरात पर प्रहार करने लगा। किन्तु किरात तो जैसे फौलाद का बना हुआ था, उस पर रंचमात्र भी असर न

हुआ। वह उसी तरह खड़ा मुस्कुराता रहा।

अर्जुन बहुत थक चुका था। उसका रोम-रोम पीड़ा से बेहाल हो गया। विवश होकर पुनः महादेव की प्रतिमा के पास पहुंचा और उनकी स्तुति करने लगा, 'हे त्रिशूलधारी! यह कैसा चमत्कार है? एक साधारण सा किरात और इतना बल! अब आप ही मेरी रक्षा करों प्रभु!

यह कहकर अर्जुन ने फूलों की माला शिवजी की प्रतिमा के गले में डाली। आराधना करते ही उसके शरीर में नवीन स्फूर्ति पैदा होने लगी। वह पुनः स्वस्थ होकर किरात की और बढ़ा, किन्तु अगले ही क्षण उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही कि जब उनके द्वारा अर्पित की गई पुष्पमाला किरात के गले में झूलती हुई देखी। वह तुरन्त समझ गया कि किरात कोई और न होकर स्वयं साक्षात शिव हैं। वह किरात के चरणों में पड़कर रुंधे स्वर में बोला, 'प्रभु! मुझसे बड़ी भूल हो गई। आप मुझे क्षमा करें। मैं आपको पहचान नहीं सका था। अनजाने में ही मुझसे बहुत बड़ा अपराध हो गया है।

भगवान शिव अपने स्वरूप में प्रकट हुएं। उन्होंने अर्जुन को उठाया और कहा, 'उठो पुत्र! तुम्हारी परीक्षा पूर्ण

अर्जुन – किरात युद्ध

हुई। तुमने कोई अपराध नहीं किया है। किरातरूप मैंने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही धारण किया था। तुम परीक्षा में सफल हुए। मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूं। मांगो पुत्र! क्या चाहते हो? अर्जुन बोला, 'भगवन् मुझे पाशुपत अस्त्र चाहिए। जिससे कि युद्ध में मैं अपने शत्रु का संहार कर सकूं।

महादेवजी बोले,' वह तुम्हें अवश्य प्राप्त होगा। किन्तु तुम्हें पहले उसे चलाने की विधि सीखनी होगी। अन्यथा वह तुम्हारे लिए ही विनाशकारी सिद्ध होगा।' यह कहकर महादेवजी ने उसे पाशुपत अस्त्र दिया और साथ ही उसे चलाने की विधि समझाते हुए बोले कि, 'तुम्हें इसे मात्र धर्म के कल्याण हेतु ही प्रयोग कर सकोगा। याद रखना क्रोध में इसे किसी निर्बल मनुष्य पर भूल से भी प्रयोग मत कर देना। और हां! उसका प्रयोग सिर्फ एक ही बार किया जा सकता है'।

पशुपत अस्त्र देकर महादेव माता पार्वतीजी समेत अन्तर्धान हो गएं और अर्जुन पाशुपत अस्त्र पाकर अपने भाईयों से आ मिला। बाद में इसी पाशुपत से उसने महाभारत युद्ध में कर्ण का वध किया था।

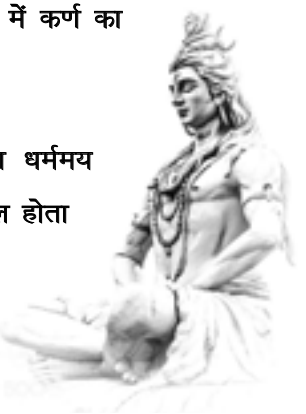

जब दृढ़ संकल्प हो, उसके पीछे की भावना धर्ममय हो, तो ही उचित दिशा में किया पुरुषार्थ सफल होता है, भगवान स्वयं प्रसन्न होकर संकल्पसिद्धि करते है।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Swagatam

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

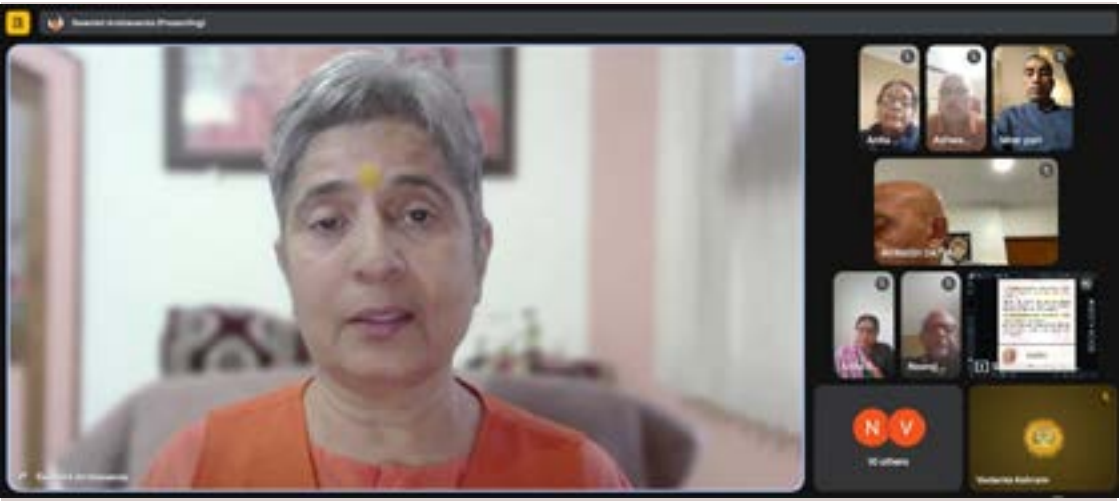

Poojya Swamini Amitananda

Subject: Tattva-Bodha

Online Vedanta Classes

Poojya Swamini Samatananda

Subject: Gita Chapter-7

आश्रम / मिशन समाचार

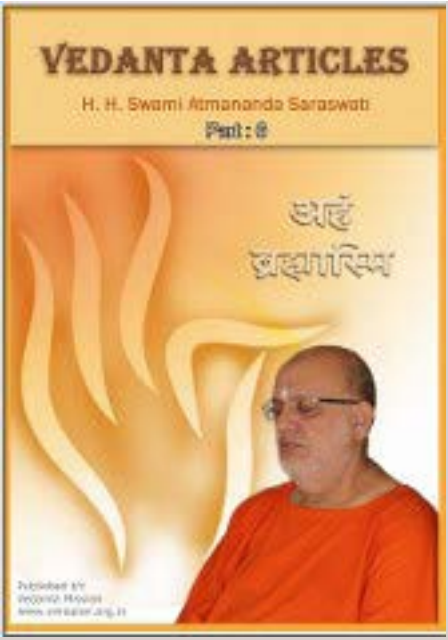

EBook Published on Vedanta Articles

Poojya Guruji

Online Ekadashi Podcast

Poojya Swamini Poornanandaji

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Bhojan Prasad

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Gau Sewa - with Laddus & Fodder

An enriching experience

आश्रम / मिशन समाचार

Roots in timeless, and flowing with times

आश्रम / मिशन समाचार

Historic moment for all Ram Bhaktas

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

श्रीमद् भगवद् गीता

(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 7.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

आश्रम / मिशन समाचार

ओनलाईन सत्संग

प्रति शनिवार, सायं 4 बजे से

on Google Meet

आदि शंकराचार्य विरचित तत्त्वबोध

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी

ओनलाईन सत्संग

प्रति रविवार, सायं 4 बजे से

on Google Meet

श्लोकपाठ / ध्यान / सत्संग

पूज्य स्वामिनी समतानन्दजी

एकादशी सत्संग

प्रति एकादशी को

on YouTube Channel

पूज्य स्वामिनी पूर्णानन्दजी द्वारा

INTERNET NEWS

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

(☝ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS
SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA
SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING
MORAL STORIES ETC

Audio Pravachans (☛ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS/
SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA
SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING
MORAL STORIES ETC

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Sandesh -Dec '25

Vedanta Piyush - Nov'25

Visit us online :
Vedanta Mission

Check out earlier issues of :
Vedanta Piyush

Join us on Facebook :
Vedanta & Dharma Shastra Group

Subscribe to our WhatsApp Channel
Vedanta Ashram Channel

Published by:
Vedanta Ashram, Indore